महौजसो मानधना धनार्चिता धनुर्भृत: संयति लब्धकीर्तय:।

न संहतास्तस्य न भिन्नवृत्तय: प्रियाणि वाञ्छन्त्यसुभि: समीहितुम ॥१९॥

अन्वय-

महौजस: मानधना: धनार्चिता: संयति लब्धकीर्तय: न संहता, न भिन्नवृत्तय: धनुर्भृत: असुभि: तस्य प्रियाणि समीहितुम् वाञ्छन्ति ॥१९॥

अर्थ-

महाबलशाली, अपने कुल एवं शील का स्वाभिमान रखनेवाले, धनसम्पत्ति द्वारा सत्कृत, युद्धभूमि मे कीर्ति प्राप्त करने वाले, परोपकार परायण तथा एक कार्य में सब के सब लगे रहने वाले धनुर्धारी शूर वीर उस दुर्योधन का अपने प्राणों से (भी) प्रिय कार्य करने की अभिलाषा रखते हैं ॥१९॥

टिप्पणी-

धनुर्धारियों के सभी विशेषणों के साभिप्राय होने से परिकर तथा पदार्थहेतुक काव्यलिङ्ग अलङ्कार की संसृष्टि इस श्लोक में है।

महीभृता सच्चरितैश्चरै क्रिया स वेद निश्शेषमशेपितक्रिय ।

महोदयस्तस्य हितानुबन्धिभि प्रतीयते धातुरिवेहित फसै ॥२०॥

अन्वय-

अशेपितक्रिय स रामचरित परै महीभृताम् किया नि शेषम् वेद । तरप धातु इन हित महोदय हितानुवधिभि फल प्रतीयते ॥२०॥

अर्थ-

आरम्भ किए हुए कार्यों को समाप्त करके ही छोड़ने वाला वह दुर्योधन अपने प्रशंसनीय चरित्र वाले राजदूतो के द्वारा अन्य राजाओं की सारी कार्यवाहियाँ जान लेता है। (किन्तु) ब्रह्मा के समान उसकी इच्छाओं की जानकारी उनकी महान् समाप्ति के फलों द्वारा ही होती है ।।२०॥

टिप्पणी-

तात्पर्य यह है कि दुर्योधन के गुप्तचर समग्र भूमण्डल में फैले हुए है । वह समस्त राजाओं की गुप्त बातें तो मालूम कर लेता है किन्तु उसकी इच्छा तो सभी शान्त होती है जब काम पूरा हो जाता है। यहाँ काव्यलिंग से अनुप्राणित उपमा अलंकार है।